International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 04, No. 02(II), April - June, 2022, pp. 154-157

सतत् विकास–वर्तमान समय की आवश्यकता

सुमन मीणा*

प्रस्तावना

वर्तमान समय में विकास आवश्यकता एवं लालच के बीच फँस गया हैं। प्रकृति की सहन शक्ति की एक सीमा हैं। सतत् विकास में पर्यावरण को केन्द्र में रखकर विकास की प्रक्रिया अपनाई जाती हैं। इसके अन्तर्गत प्रकृति की सहनशक्ति के अनुसार विकास व पर्यावरण के मध्य संतुलन स्थापित करने का प्रयत्न किया जाता है।

किसी देश की प्रगति का पैमाना विकास को माना गया हैं। बहुधा यह माना जाता है कि अगर कोई देश विकास कर रहा हैं तो इसका अर्थ हैं कि उस देश के निवासियों का जीवन स्तर ऊँचा हो रहा हैं। ऊँचे जीवन स्तर की चाह में देशों के बीच विकास की रफ्तार में आगे बढ़ने की होड़ होने लगी हैं। चूंकि इस प्रकार के विकास की कीमत हैं। यह विकास प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करता हैं। विकास की हौड़ में देशों के बीच प्राकृतिक संसाधनों का अधिक से अधिक प्रयोग करने का लालच बढ़ने लगा हैं जिससे पर्यावरण को नुकसान होने लगा हैं। जब प्राकृतिक संसाधन समाप्त हो जायेंगे, तो ऐसे विकास से किसको लाभ होगा। सिर्फ क्रंकीट की इमारतें खड़ी करना ही तो विकास नहीं है, अपितु इसके साथ–साथ जीवन की गुणवत्ता में भी सुधार होना जरूरी हैं। आज सभी देशों को संसाधनों के समाप्त होने के डर के कारण विकास के ऐसे आदर्श मॉडल की आवश्यकता महसूस हो रही हैं जो प्रकृति की सहनशक्ति के मुताबिक हो, यही से सतत् विकास की अवधारणा प्रारम्भ हुई।

सतत विकास शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग 1980 में IUCN (International Union for conservation of Nature) द्वारा प्रस्तुत World conservation strategy द्वारा किया गया था। इस शब्द को 1987 में पर्यावरण एवं विकास पर विश्व आयेाग की बुंटलैंड रिपोर्ट, जिसका शीर्षक Our Common निजनतम था, में पहली बार परिभाषित किया गया। इसके अनुसार सतत् विकास से आशय भविष्य की पीढ़ियो की आवश्यकताओं से समझौता किए बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करना हैं।

सतत् विकास का तात्पर्य हैं – ऐसा विकास जो हमेशा चलता रहें। यह विकास अनन्त होता हैं। कोई भी विकास तभी निरन्तर हो सकता हैं जब प्राकृतिक संसाधनों को कोई नुकसान न हो। इस प्रकार इसमें प्रति व्यक्ति वास्तविक आय में वृद्वि, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं जीवन की गुणवत्ता में सुधार के साथ (आर्थिक विकास) ही प्राकृतिक संसाधनों की गुणवत्ता में सुधार के माध्यम से (पर्यावरण संरक्षण) लोगों के जीवन की गुणवत्ता में सतत् सुधार पर बल दिया जाता हैं।

* सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र, राजकीय महाविद्यालय, देवली, टोंक, राजस्थान।

आर्थिक वृद्वि के अन्तर्गत वस्तुओं और सेवाओं की मात्रात्मक वृद्वि को मापा जाता हैं ताकि इससे लोगों का जीवन स्तर उठाया जा सके इसमें वस्तुओं व सेवाओं का लोगों के बीच समान वितरण की बात नहीं की जाती हैं। जबकि समावेशी विकास में वस्तुओं व सेवाओं तक सभी लोगों की पहुँच सुनिश्चित करने की कोशिश की जाती हैं। सतत् विकास में समावेशी विकास अर्थात् सबका साथ, सबका विकास के साथ पर्यावरण संरक्षण को भी शामिल किया जाता हैं।

सतत् विकास एक व्यापक अवधारणा हैं। कोई विकास सतत् हैं या नहीं, यह जानने के लिए इसके मापदण्ड निर्धारित करना तथा उस पर विकास को मापना जरूरी हैं। सतत् विकास को मापने हेतु प्रकृति की सामर्थ्य क्षमता (Carrying Capacity) पर ध्यान देना होता हैं। पृथ्वी की सामर्थ्य क्षमता प्रकृति की सहनशक्ति को दर्शाता हैं। यह मानव जाति के विकास की निरन्तरता को बनाए रखने में पृथ्वी की सामर्थ्य क्षमता को बताता हैं। अर्थात् पृथ्वी मानव की निरन्तरता को बनाए रखने में कितनी सक्षम हैं, साथ ही विकास के दौरान उत्पन्न हुए मानवीय प्रदूषक तत्वों को कितनी आसानी से यह निंयत्रण कर पाती हैं। यहां हमें गांधी जी के कथन को ध्यान रखना होगा – ''प्रकृति आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम हैं, परन्तु लालच नहीं। (There is enough for need, not for greed)'' वर्तमान समय में विकास आवश्यकता व लालच के बीच फँस गया है। देशों ने लालच के वंशीभूत पर्यावरण संरक्षण को दरकिनार कर दिया हैं।

सतत् विकास के मापदण्ड में अगला बिन्दु पीढ़ियों के मध्य समतापूर्ण वितरण से संबंधित हैं। इसके अन्तर्गत वर्तमान व भावी पीढ़ियों के बीच संसाधनों का समतापूर्ण उपयोग तथा साथ ही वर्तमान मानव जनसंख्या के बीच (राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय) संसाधनों का समान वितरण शामिल हैं। चूंकि प्राकृतिक संसाधन सीमित हैं, अतः सतत् विकास की अवधारणा उत्पन्न हुई हैं। अगर यह संसाधन असीमित होते तो कोई समस्या ही नहीं होती, लेकिन ऐसा नहीं हैं। विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का अमूल्य खजाना खत्म हो रहा हैं, जिसे कुदरत ने करोड़ो साल से सहजा था। अगर यह खजाना इसी तरीके से खाली होता रहें तथा इसकी क्षतिपूर्ति ना हो तो इसके भयानक परिणाम उत्पन्न हो सकते हैं। जीव–जन्तुओं की नस्लें गायब हो सकती हैं, समुद्र स्तर बढ़ सकता हैं, दुनिया खत्म हो सकती है।

'We don't inherit the earth from our Ancestors,

but we have borrowed it from our children.'

संसाधनों का उपयोग करते समय हमें यह ध्यान रखना जरूरी हैं कि यह पृथ्वी हमें हमारे पूर्वजों से विरासत में नहीं मिली है, अपितु यह एक उधार हैं जो हमारी आने वाली पीढ़ियों से हमने लिया हैं। अतः इसे सहज कर रखना जरूरी हैं। हमारा दायित्व बनता हैं कि जैसे हमें यह पृथ्वी हमारे पूर्वजों से मिली हैं वैसे हम इसे हमारी आने वाली पीढ़ियों को सौंपें। यह एक जिम्मेदारी हैं, उत्तराधिकार नहीं।

सतत् विकास के अन्तर्गत लिंग भिन्नता को समाप्त करने की बात भी की जाती हैं। स्वामी विवेकानन्द का कथन "There is no chance of welfare of the world, unless the condition of women is improved it is not possible for a bird to fly on one wing. जब तक विकास के वितरण में लिंग आधारित भेदभाव होगा, तब तक ऐसा विकास एकपक्षीय, अन्यायपूर्ण व अधारणीय होगा। चूंकि विकास में सभी का योगदान होता हैं अतः इसका वितरण भी समतापूर्ण होना जरूरी हैं। सतत् विकास में लिंग समानता पर जोर दिया जाता हैं।

सतत् विकास एकपक्षीय ना होकर विविधतापूर्ण होना जरूरी हैं ताकि यह स्थायी हो सकें। इस हेतु सतत् विकास में Bottom up Approach पर ध्यान दिया जाता हैं ताकि सीमान्त गरीबों, आदिवासियों, वंचितों, महिलाओं एवं बच्चों को विकास का पूरा लाभ मिल सकें।

सतत् विकास की परिभाषा व मापदण्ड को जानने के बाद यह जानना जरूरी हैं कि वर्तमान में सतत विकास सुखिर्यों में क्यों है ? प्रकृति की सीमित सहनशक्ति ने विकास की इस धारणा की तरफ हमारा ध्यान खींचा हैं। प्राकृतिक संसाधन सीमित व विविध उपयोगों में काम में लिये जाते हैं। विकास हेतु संसाधनों की आवश्यकता होती है। इन संसाधनों का अत्यधिक दोहन ही इनकी समाप्ति का कारण बन रहे हैं। इनकी पर्याप्त

क्षतिपूर्ति ना होने के कारण अब यह चिन्ता होने लगी है कि हमारी आर्थिक गतिविधियाँ समाप्त न हो जायें। अतः सतत् विकास जैसे एक आदर्श मॉडल की आवश्यकता होने लगी जो विकास के साथ–साथ पर्यावरण को भी सुरक्षित रख सकें।

दुनिया के अधिकांश देशों में गरीबी, भुखमरी और असमानता जैसी समस्याएँ भयावह रूप धारण कर रही है। ऐसे में विकास करना अनिवार्य है। दुनिया में कुल गरीबों की लगभग 1/3 जनसंख्या भारत में रहती हैं। लोगों को गरीबी से निकालने के लिए विकास जरूरी हैं। अगर हम विकास नहीं करेगें तो दुनिया में पीछे रह जायेगें तथा हमारे नागरिकों का जीवन स्तर निम्न रह जायेगा अतः विकास को छोड़ा नहीं जा सकता हैं। ऐसे में सतत् विकास ही हमें वो रास्ता बताता हैं जिससे हम जरूरत व लालच के बीच अंतर स्पष्ट कर सकें।

सतत् विकास में जनसंख्या (Population) एक महत्वपूर्ण कड़ी हैं। आबादी किसी देश की एक बहुत बड़ी सम्पदा हैं परन्तु अनियंत्रित आबादी जल, जंगल, जमीन पर अत्याधिक दबाव उत्पन्न करती हैं। बढ़ती आबादी की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग करना लाजमी हैं। इस हेतु सतत विकास की अवधारणा महत्वपूर्ण हो जाती हैं।

अगर वर्तमान में हम विकास व पर्यावरण के मध्य संतुलन स्थापित नहीं कर पाये तो हो सकता हैं कि यह पृथ्वी हमारे निवास के लिए कम पड़ जायें तथा हमें एक ओर पृथ्वी की जरूरत पड़ जायें। क्रंकीट, इमारतों व शहरीकरण को कुछ लोग विकास मानते हैं जबकि पर्यावरणविद् इसे विनाश मानते हैं। जरूरत हैं कि हम विकास व विनाश के मध्य सूक्ष्म अन्तर को पहचानें और उस पथ पर चलें जो कि स्थायी और सर्वोत्तम हो।

संतुलित अथवा सतत विकास की प्राप्ति हेतु 1980 के दशक के बाद से काफी जोर दिया जा रहा हैं। संयुक्त राष्ट्र द्वारा Sustainable Development Goal नाम से रिपोर्ट जारी की जाती हैं जो सतत् विकास की प्राप्ति में हमारे प्रयासों को बताती हैं। राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस हेतु प्रयास किए जा रहे हैं। राष्ट्रीय स्तर पर नीति आयोग सतत् विकास के निर्धारित लक्ष्यों की प्रगति को देखता है। संयुक्त राष्ट्र ने वर्ष 2000 में सहस्त्राबदी विकास लक्ष्य (MDG) की अवधारणा प्रारंभ की थी जिसमें वर्ष 2015 तक 7 लक्ष्यों को प्राप्त करने की समय सीमा निर्धारित की गई। इसी प्रकार 2015 में 17 लक्ष्यों को समाहित करते हुए सतत् विकास लक्ष्य ¼क्ळ) नामक अवधारणा प्रारम्भ की गई हैं, जिनको 2030 तक प्राप्त करना है। इसमें आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, पर्यावरण, लैंगिक सभी स्तरों पर सतत् विकास की अवधारणा को शामिल किया गया हैं ताकि उपर्युक्त स्तरों पर विकास का लाभ सभी को मिलें तथा साथ ही पर्यावरण भी संरक्षित रह सकें।

सतत् विकास की प्राप्ति में विकसित व विकासशील देशों के विचारों में भिन्नता एक मुख्य बाधा हैं। विकसित देश प्राकृतिक संसाधनों का अमितव्ययतापूर्ण उपयोग करके बहुत कम समय में विकास की दौड़ में आगे हो गये है। अब यह देश विकासशील देशों को संसाधनों का सीमित उपयोग करने हेतु प्रतिबंधो का इस्तेमाल कर रहे हैं। यूरोपियन यूनियन के एक अध्ययन (2015) के अनुसार कुल Co_2 उत्सर्जन में चीन (29%), यू.एस.ए. (14.5%), यूरोपियन यूनियन (9.6%), भारत (6.8%), कनाडा (1.6%), स. अरब (1.4%) की हिस्सेदारी रही, जो क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, षष्ठम् स्थान पर थे, जबकि प्रति व्यक्ति कार्बनडाईआक्साइड उत्सर्जन के आधर पर कनाडा (19%), यू.एस.ए. (14.5%), स. अरब (16%), यूरोपियन यूनियन (7.2%), चीन (7.7%) व भारत (1.9%) की हिस्सेदारी रही। इससे समझ आता है कि प्रति व्यक्ति कार्बन उत्सर्जन में विकसित देश विकासशील देशों से बहुत आगे है। यह अनिवार्य हैं कि विकसित व विकासशील देश साझा तथा विभेदात्मक जिम्मेदारी (Common but Differentiated Responsibility) उठाये। विकसित देश अपनी जिम्मेदारी से पीछे नहीं हट सकते तथा हर समस्या का बोझ विकासशील देशों पर नहीं डाल सकते। उन्हें सक्रियतापूर्वक अपने–अपने राष्ट्रीय निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करना चाहिए भले ही इससे विकास की रफ्तार धीमी क्यों ना हो।

मानव जीवन की स्वस्थ निरन्तरता के लिए पृथ्वी का स्वस्थ होना जरूरी हैं। जब पृथ्वी ही रोगी हो जायेगी तो मानव जीवन समाप्त होने में समय नहीं लगेगा। आवश्यकता हैं कि हम ऐसे विकास मॉडल को अपनायें जिससे आय बढ़ें, संसाधनों की क्षमता बढ़ें तथा अपशिष्ट न्यूनतम हो।

पर्यावरण व विकास के बीच संतुलन साधना तलवार की धार पर चलने के समान हैं। यह मुश्किल हैं परन्तु नामुमकिन नहीं हैं। सौर मण्डल में पृथ्वी ही एकमात्र ऐसा ग्रह हैं जहाँ जीवन संभव हैं। अगर इस पृथ्वी को भविष्य में रहने योग्य बनाये रखना हैं तो यह जरूरी हैं कि हम विकास के हर पहलू में पर्यावरण संरक्षण को शामिल करें। यदि आज हम विकास की उचित नीतियां नहीं बना पायें तो भावी पीढ़ी तक मानव जीवन को एक निश्चित निर्वाह के स्तर पर बनाये रखने के लिए आवश्यक परिस्थितिकी कायम नहीं रह सकेगी। संयुक्त राष्ट्र परिदृश्य यह संकेत देता हैं कि यदि वर्तमान आबादी व खपत की प्रवृत्ति ऐसे ही जारी रहती हैं तो वर्ष 2030 तक हमें जीवन निर्वाह हेतु दो पृथ्वीयों की जरूरत होगी।

अतः वैश्विक स्तर पर देशों को आपसी सहयोग करते हुए सतत् विकास की प्राप्ति हेतु अग्रसर होने की महत्ती आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. एम.एल. झिंगन, ''विकास का अर्थशास्त्र एवं आयोजन'' वृंदा पब्लिकेशन प्रा. लि.।
2. एस.एन. लाल एवं एस.के. लाल, ''भारतीय अर्थव्यवस्था'' शिवम् पब्लिशर्स।
3. आर.एस.टी.वी., Sustainable Development. विकास और भविष्य, फरवरी 15, 2018
4. समसामियकी पत्र–पत्रिकाएँ।
5. गूगल ब्राउजर।

❖◆❖